कैसा रहस्य था ...

सत्यदास

जो दूसरों से कहीं अधिक जानता था, लेकिन फिर भी ...

एक सर्वश्रेष्ठ कहानी एक सर्वप्रिय बंगाली लेखक द्वारा

बिमल कॉर

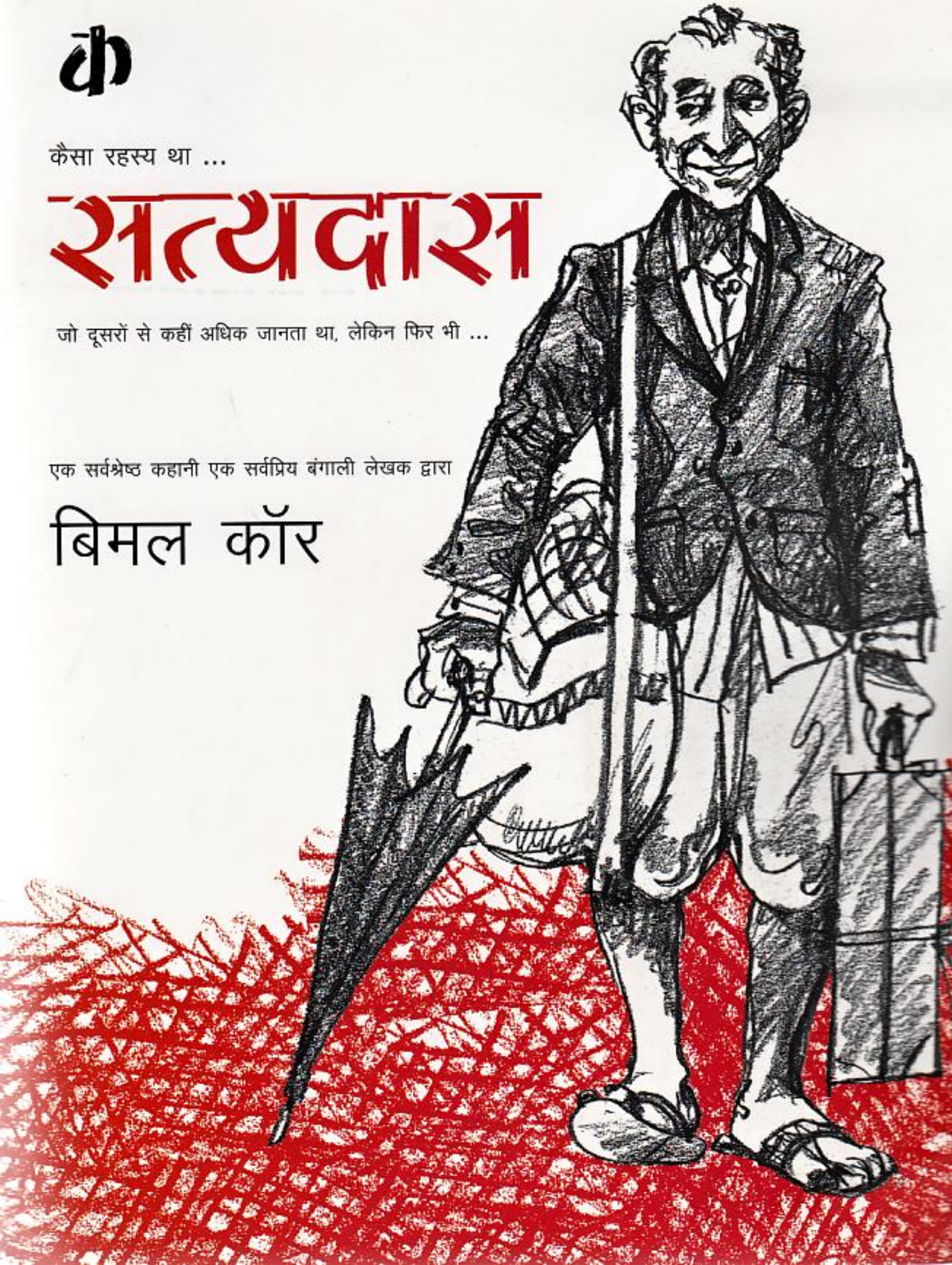

सत्यदास

बिमल कॉर

द्वारा लिखित सत्य और असत्य का अन्वेशण करती
एक अद्‌भुत रहस्यमय कहानी

चित्राँकनः नीता गंगोपाध्याय

कथा

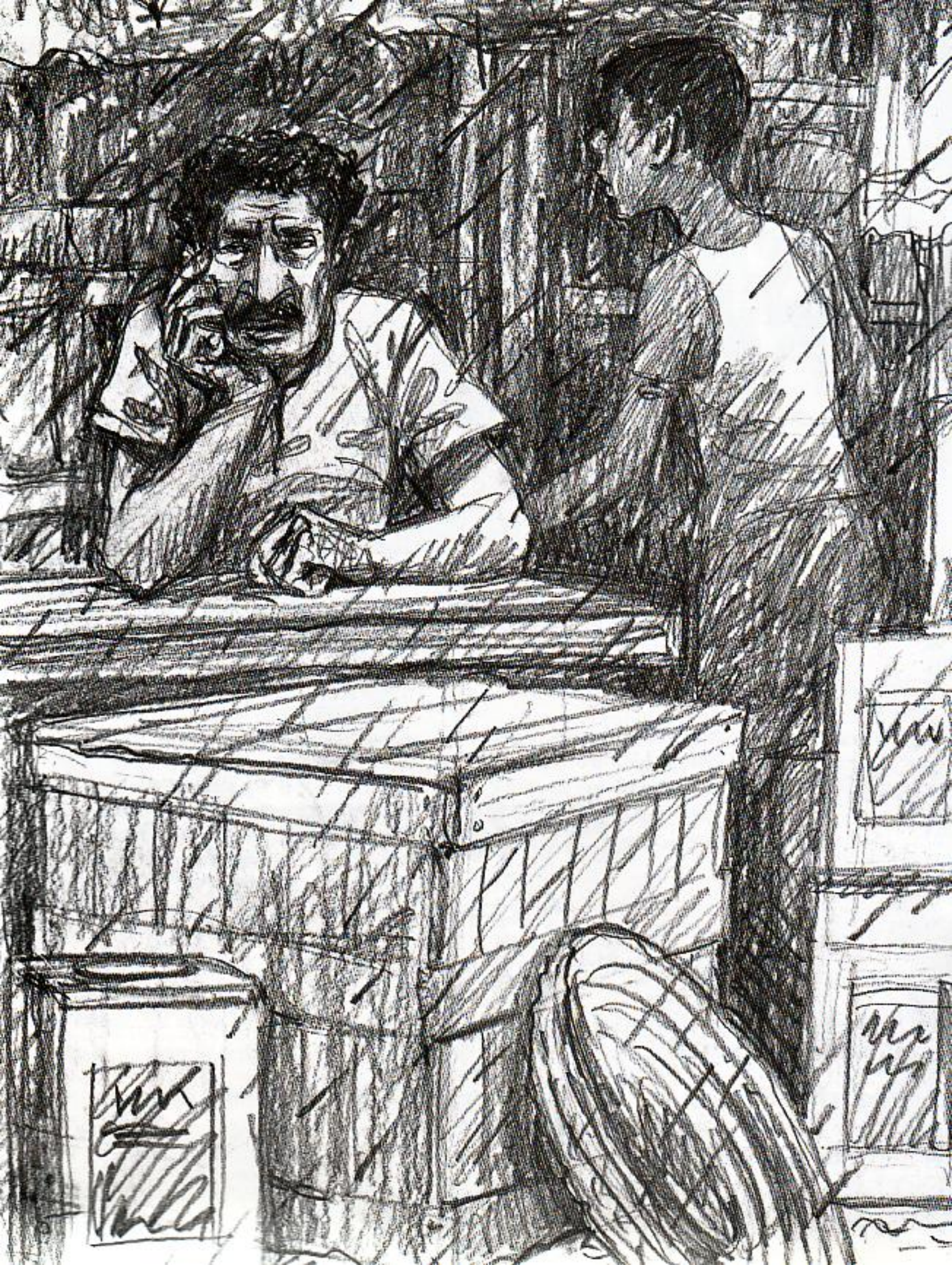

बारिश

बारिश, बारिश और बारिश, निशिपुर में पाँच दिनों और पाँच रातों तक लगातार बारिश होती रही।

रघुनाथ तंग आ चुका था। व्यापार भी मन्दा चल रहा था।

रघुनाथ की एक परचून की दुकान थी। बंगाल के खदानों के इस शहर के सिरे पर स्थित, एक चुपचाप-सी गली में थी यह दुकान। वैसे दुकान सामान से भरी थी। चावल, दालें, नमक, तेल, प्याज़, आलू, लइया और बताशे, सभी कुछ था। परन्तु फिर भी रघुनाथ पर्याप्त पैसा नहीं जुटा पा रहे थे।

रघुनाथ को आशा थी कि ठीक समय आ जाएगा। हलधर जितना कमाने की उसे आशा नहीं थी। उस इलाके में परचून की सबसे पुरानी दुकान उन्हीं की थी। उनकी दुकान में टिन्ड दूध से लेकर मच्छरदानी तक, सभी कुछ मिलता था। पर उसे समझ नहीं आता था कि उनकी बिक्री आसपास की अन्य दुकानों से भी कम क्यों थी। अपने खरीदारों से भी उसका बर्ताव काफ़ी नरम था। उसकी चीज़ों के दाम भी ज़रूरत से ज़्यादा नहीं थे। वह कभी बासी सामान दूसरों के सिर थोपने की कोशिश भी नहीं करता था। वैसे भी वह बस काम चलाने लायक पैसा ही कमा पता था। उसे अपने लिए, अपनी पत्नी यमुना के लिए और युवा सहायक बिशु की तन्ख्वाह देने लायक पैसे की ज़रूरत थी। बिशु लंगड़ा था। उसे दुकान के छोटे-छोटे काम करने के लिए रखा गया था। वैसे रघुनाथ ज़्यादातर काम खुद ही कर लेता था।

अंधेरा छा रहा था। रघुनाथ बैठा-बैठा दुकान के बाहर की झाड़ियों पर गिरती वर्षा की बूँदें देख रहा था। कौए खुद को सूखा रखने के लिए पेड़ों की डालियों में छिपने की कोशिश कर रहे थे। पानी से भरी गली सुनसान हो गई थी।

"तुम घर चले जाते तो अच्छा था," उसने बिशु से कहा, "गीले मत होना, तुम्हें बुखार चढ़ जाएगा। अपना सिर ढक लेना।"

बिशु ने एक फटी हुई पॉलीथीन के टुकड़े को सिर पर लपेट लिया और उस सूने रास्ते पर निकल पड़ा।

दुकानें बन्द होने का समय हो चला था। रघुनाथ सन्ध्या की प्रार्थना शुरू करने वाला था। अचानक उसे बाहर एक धुँधली-सी छाया हिलती-सी दिखाई दी। वह उसे देखने के लिए रुक गया। हल्की-हल्की बूँदा-बाँदी के मध्य, एक आदमी दिखाई दिया। एक अजनबी, बाल बिखरे-बिखरे, बिना बनाई दाढ़ी, उसके एक हाथ में काले रंग का बदरंग-सा छाता था और दूसरे में एक लकड़ी का बक्सा। उसके दाहिने कंधे पर कपड़े की एक पोटली लटक रही थी और उसने मैली-सी धोती पहन रखी थी। कमीज़ के ऊपर पहने हुए घिसे हुए काले कोट के कुछ बटन गायब थे। कई जगहों पर कोट की मरम्मत की गई थी। उसकी चप्पलें घिसी हुई थीं।

"आपको क्या चाहिए?" रघुनाथ ने पूछा। अजनबी ने अपना बक्सा नीचे रख दिया। "भाई, क्या मुझे यहाँ लइया मिलेगी?"

रघुनाथ ने सिर हिलाया। "पर यह अच्छी नहीं होगी। इस मौसम में लइया सीली-सीली हो जाती है।"

"अच्छा, तो थोड़ा सा चिवड़ा और गुड़ हो तो ठीक है।"

उस आदमी ने अपना सामान एक पुराने टूटे-फूटे बेंच पर रख दिया।

"तुम कहाँ से आए हो?" रघुनाथ ने पूछा।

"धर्मपुर से।"

रघुनाथ ने इस जगह का नाम कभी नहीं सुना था। निशिपुर के आस-पास लगभग दस मील तक कई अन्य खदानों वाले शहर थे। शायद धर्मपुर उन्हीं में से एक था।

"बाबू, मैं अपने हाथ धोना चाहता हूँ। मुझे एक लोटा पानी मिल सकता है?" रघुनाथ एक अजनबी को अन्दर आने के लिए कहकर बहुत मुश्किल में पड़ गया था। उसने एक बाल्टी पानी और एक टिन का मग उसे दिया, "जाइए मुँह-हाथ धो लीजिए। यह मेरे कुँए का पानी है।"

शर्मिन्दा होकर उस आदमी ने कहा, "बाबू, बस एक लोटा पानी ही काफ़ी था।"

"तुम कीचड़ से सने हो। जाओ जाकर हाथ-मुँह धो लो।"

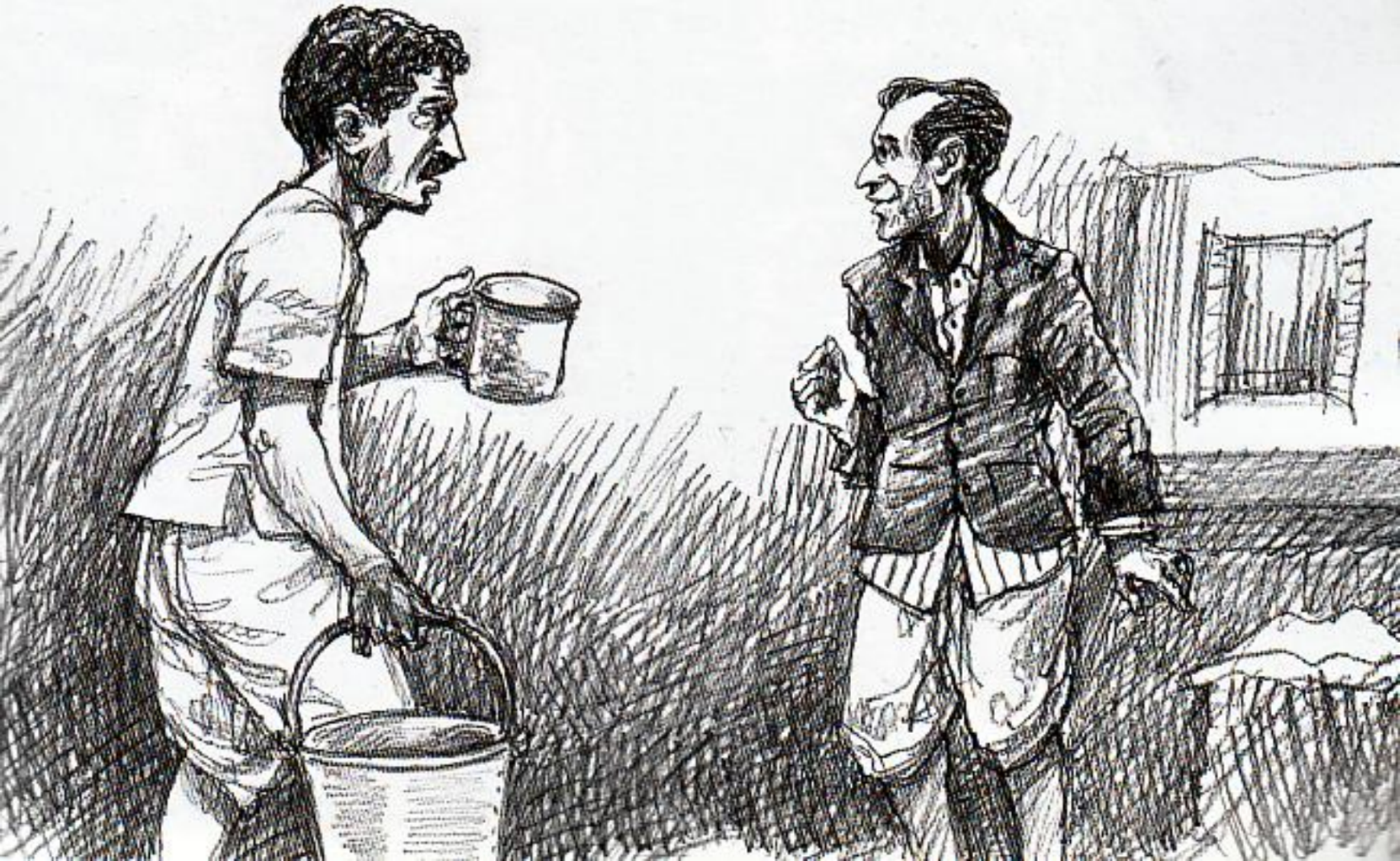

वह आदमी कुछ दूर जाकर अपने को साफ़ करने लगा।

"तुम्हारा नाम क्या है?" रघुनाथ ने पूछा।

"मुझे सत्यदास कह सकते हैं।" उसने अपने पैर धो लिए थे। फिर उसने कुल्ला किया और बोला, "यहाँ का पानी बहुत बढ़िया है, बाबू। बहुत अच्छा स्वाद है।"

"इस बारिश में तुम कहाँ जा रहे हो?"

"कह नहीं सकता। बस निकल पड़ा हूँ, जहाँ भी मेरे पैर ले जाएं ..."

रघुनाथ मुस्कराया, "पर तुम्हें रात काटने के लिए तो कहीं रुकना पड़ेगा।"

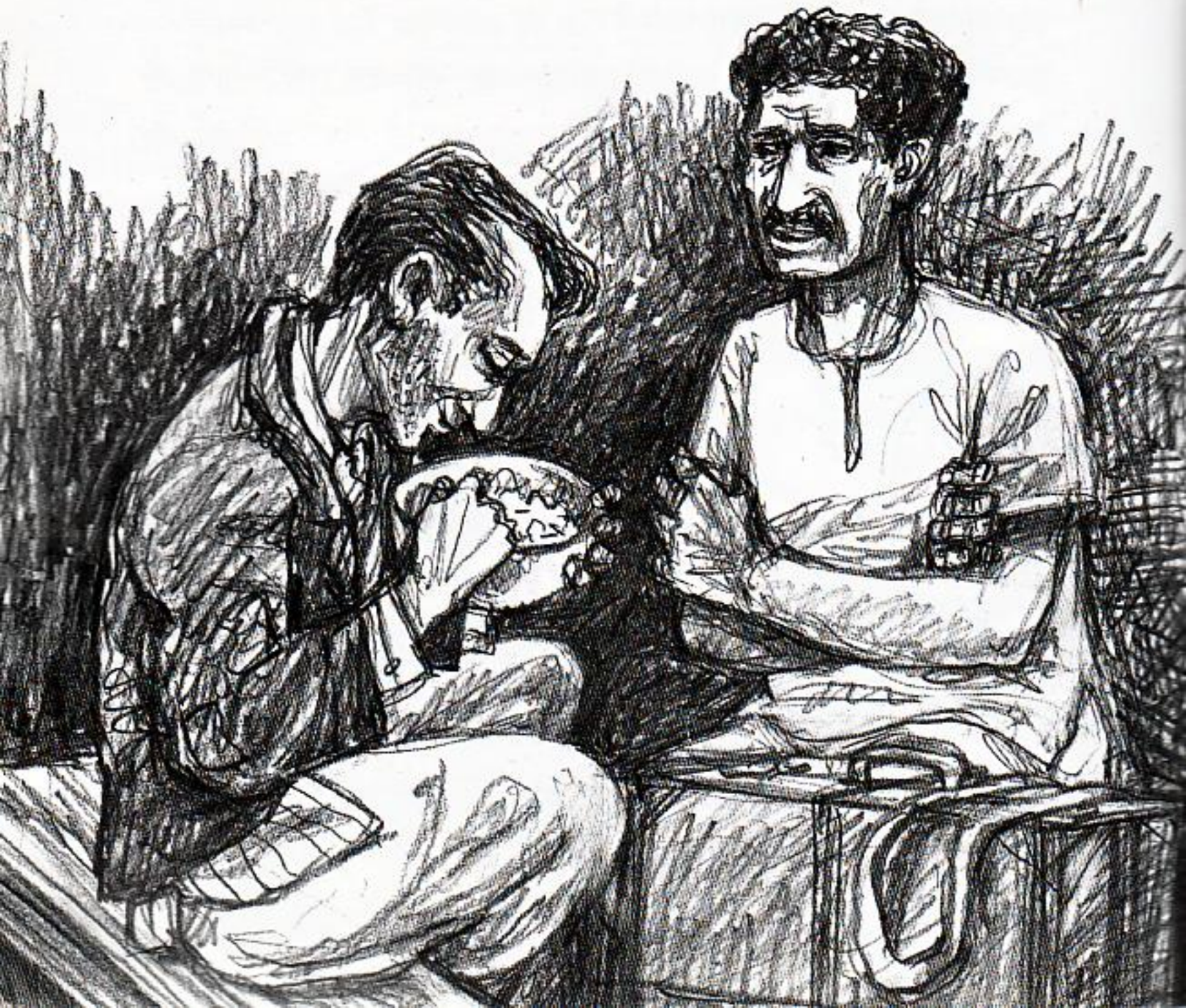

"हाँ, रुकना तो पड़ेगा। किसी भी तरह का रहने का स्थान हो तो गुज़ारा चल जाएगा।" कहकर सत्यदास ने बाल्टी और मग वापस कर दिया।

"एक मिनट रुकना," रघुनाथ बोला, "तुम्हें चिवड़ा और गुड़ भिगोने के लिए किसी बर्तन की ज़रूरत होगी क्या?"

"मेरे पास एक डोंगा है।" सत्यदास ने अपनी पोटली खोलने की कोशिश की।

"मैं तुम्हें दे देता हूँ," रघुनाथ बोला। वह इनैमल का एक बर्तन और एक लोटा पानी ले आया। "लो इसमें चिवड़ा गुड़ भिगा लो। खाने के बाद उसे धो देना।"

लगता था भूख से उसकी जान निकल रही थी। खाने के लिए केवल चिवड़ा और गुड़ था, फिर भी वह भूखों की तरह उसे चट कर गया। "तुम अपना गुज़ारा कैसे चलाते हो, सत्यदास?" उसके चेहरे पर एक मुस्कान उभरी।

"मैं जड़ी-बूटियाँ और उनसे बनी दवाइयाँ बेचने के लिए जगह-जगह घूमता हूँ।

जड़ी-बूटियों से साँप, बिच्छू के काटने का, पुराने घावों, बदहज़्मी, हड्डियों के दर्द आदि सभी का उपचार होता है।"

"साँप के काटे में वे क्या फ़ायदा करती हैं? मैंने कुछ ऐसी घटनाएँ देखी हैं। जड़ी-बूटियाँ ठीक नहीं रहती।"

"साँप का ज़हर अलग-अलग तरह का होता है, बाबू। यदि साँप बहुत अधिक ज़हरीला हो तो ये जड़ी-बूटियाँ काम नहीं करती। पर कुछ कम खतरनाक ज़हर के इलाज के लिए ठीक हैं।"

"तुम क्या कह रहे थे? तुम्हारे पास गठिया के दर्द के लिए इलाज है? मेरी पत्नी गठिया का दर्द भोग रही है।"

"हाँ, मेरे पास उसके इलाज के लिए कुछ जड़ी-बूटी है। वैसे यह पुराने दर्द के लिए नहीं है। मेरे पास जो दवा है, वह सिर्फ़ अभी-अभी हुई बीमारी के लिए है जैसे कि बारिश के कारण बढ़ जाने वाला दर्द।" सत्यदास ने फिर पानी पिया और बाहर चला गया बर्तन धोने के लिए। बर्तन और लोटा उठाकर रख दिया।

"घर पर तुम्हारा कौन इंतज़ार कर रहा है?" रघुनाथ ने पूछा।

"कोई नहीं। मैं तो ख़ानाबदोश हूँ। भगवान मेरे साथ है।" सत्यदास स्वयं ही मुस्करा दिया। रघुनाथ उसको देखता रहा। एक ख़ानाबदोश को।

अजनबी

समय हो गया था। रघुनाथ ने शटर नीचे गिरा दिया। लेकिन सत्यदास कहाँ जाएगा? काफ़ी तेज़ बारिश हो रही थी। रघुनाथ को समझ नहीं आया क्या करे। उस मौसम में वह उसे बाहर नहीं भेज सका। और न ही बादल छँट जाने तक उसके साथ बैठ सकता था। "सत्यदास, अभी बारिश हो रही है, अभी नहीं जा सकते तुम। यहीं इंतज़ार करो। मुझे अन्दर जाना पड़ेगा। मेरी शाम की पूजा का समय हो गया है।"

सत्यदास चौंका, "अरे नहीं, नहीं! मैं आपकी पूजा में बाधा डाल रहा हूँ! क्षमा कीजिएगा। मैं चलता हूँ ..."

"तुम इस बारिश में कहाँ जाओगे? थोड़ी देर रुक जाओ। पानी गिरना बन्द हो जाए तो चले जाना। मैं अन्दर हूँ। जाने से पहले मुझे बुला लेना।"

रघुनाथ को कुछ शर्मिन्दगी हुई। इस ख़ानाबदोश से पैसा लेगा जिसके पास एक धेला तक नहीं है? इतनी छोटी-सी चीज़ के लिए पैसे? बेचारे को यहाँ खराब मौसम के कारण रहना पड़ा। उसने थोड़ा-सा चिवड़ा खाया होगा।

उसका दाम भी शायद एक रुपए से ज़्यादा न हो। रघुनाथ एक रुपया नहीं लेगा तो और गरीब नहीं हो जाएगा।

"छोड़ो भी। तुम्हें पैसे देने की ज़रूरत नहीं।" सत्यदास ने उसे गौर से देखा।

"नहीं बाबू! यह नहीं हो सकता।"

"क्यों नहीं?"

"मैं चाहे पढ़ा लिखा नहीं हूँ, पर तुमने तो शास्त्र पढ़े हैं, पुरानी धार्मिक पुस्तकें। कहा जाता है, इस तरह से पैसा न चुकाना धर्म के विपरीत जाने के समान है।"

"बहुत हो चुका तुम्हारा ड्रामा!" रघुनाथ बोला। कुछ मुस्करा कर उसने फिर कहा, "अच्छा ठीक है, तुम जीते। लाओ पचास पैसे दे दो।"

"यह तो बहुत कम है, बाबू।"

"मुझे इतना ही चाहिए। मैं अपने धर्म का पालन करूँगा, तुम अपने धर्म का।" सत्यदास ने अपनी पॉकेट में सिक्का ढूँढने की कोशिश की। फिर अचानक उसके दिमाग में एक विचार आया और वह अपने बक्से के चारों ओर बंधी रस्सी खोलने लगा।

"बाद में पैसे दे देना," रघुनाथ बोला, "जल्दी नहीं है।"

"नहीं बाबू, कृपया ..."

अब तक सत्यदास ने अपना बक्सा खोल लिया था। उसमें कुछ अजीब-सी चीज़ें थीं। छोटी-छोटी कागज़ की पुड़ियाँ, काँच के कटोरे, एक जोड़ी गिलास, कुछ काली-काली जामुन के आकार की गोल गेंदें, एक छड़ी, कुछ रंगीन रूमाल। उसने उस सामान में कुछ छाँटने की कोशिश की और एक काले से रंग की पोटली निकाली। सत्यदास जब वह पोटली खोल रहा था तो कुछ चीज़ नीचे गिरी। एक सोने की गिन्नी! सत्यदास ने नहीं देखा पर रघुनाथ ने यह देख लिया था। इस गरीब-कबाड़ी को यह गिन्नी कहाँ से मिली?

"यह लीजिए, बाबू।" सत्यदास उसे पैसे देने लगा। "आपको कम से कम एक रुपया ले लेना चाहिए।"

रघुनाथ अभी भी हैरान था। वह बोला, "नहीं पचास पैसे ही काफ़ी हैं।" उसने पैसे ले लिए। फिर उसने उसके बक्से की ओर देखा। सामान्य स्वर में बोला, "तुमने काफ़ी चीज़ें इकट्ठी कर रखी हैं।"

"जी हाँ, यह मेरा जादू का पिटारा है।"

"जादू का पिटारा?"

"मुझे काफ़ी घूमना पड़ता है। अपनी चीज़ें बेचनी होती हैं। मैं अपने ग्राहकों को जादू के ज़ोर पर आकर्शित करता हूँ – ताशों का जादू, हाथों की जादूगरी, उछालने का कमाल आदि। मैं पानी को अलग-अलग रंगों में बदल सकता हूँ। गुज़ारे के लिए पैसा कमाना हो तो तुम्हें बहुत कुछ करना पड़ता है।

"तो तुम एक जादूगर भी हो!" रघुनाथ हँस दिया। "तुममें तो बहुत सारे हुनर हैं, सत्यदास।"

सत्यदास कुछ शर्मिन्दा-सा हुआ। बोला, "नहीं सर, मैं तो एक गरीब इंसान हूँ। बहुत तुच्छ।"

"ठीक है। तुम यहीं रहो। मैं अन्दर जा रहा हूँ। जब जाने लगो तो मुझे बता देना।

रघुनाथ ने दुकान का शटर थोड़ा नीचे खींच दिया और अन्दर चला गया।

जब रघुनाथ अपनी सन्ध्या की पूजा के बाद बाहर आया तों बारिश रुक गई थी। सत्यदास बेंच पर सिकुड़कर बैठा था। एक फटी-पुरानी चादर अपने ऊपर डाल रखी थी। उसका बक्सा ज़मीन पर पड़ा था। एक झोला जिसमें से उसने अपनी चादर निकाली थी, वहीं पर अधखुला पड़ा था। वह बैठा-बैठा काँप रहा था।

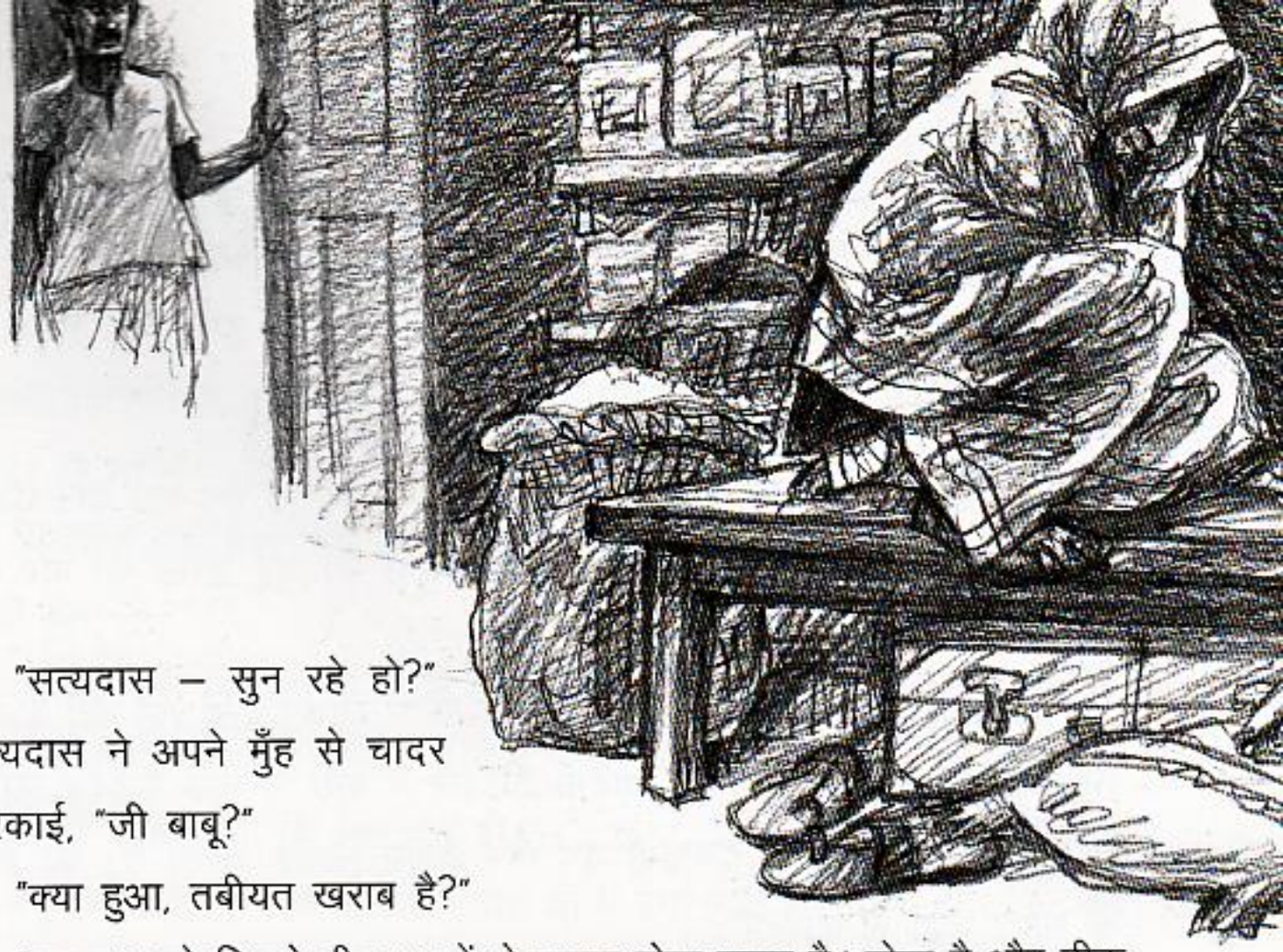

"सत्यदास – सुन रहे हो?"

सत्यदास ने अपने मुँह से चादर सरकाई, "जी बाबू?"

"क्या हुआ, तबीयत खराब है?"

"बुखार। मुझे पिछले तीन सालों से बुखार होता रहता है। होता है और ठीक भी हो जाता है। चिन्ता नहीं कीजिए, सर। मैं ठीक हो जाऊँगा। जैसे ही बुखार उतरेगा मैं चला जाऊँगा।"

कुछ नाराज़गी से रघुनाथ बोला, "तुम्हें चले जाने के लिए किसने कहा? मैं तो तुम्हारे बुखार की वजह से चिन्तित था। तुम तो काँप भी रहे हो।"

"बारिश में भीगने के कारण बुखार हो गया है, बाबू। पर उतर जाएगा।"

"बुखार उतर भी जाए तो भी तुम आज यहीं पर रहो। तुम दुकान में सो सकते हो।"

"लेकिन यह ठीक नहीं, एक बीमार आदमी का आपके घर रहना?"

"जैसा मैं कहता हूँ, करो। अभी मैं जा रहा हूँ। बाद में आऊँगा।" रघुनाथ ने शटर और नीचे गिरा दिया। उसने लालटेन को उठाकर कमरे के कोने में रख दिया।

मुस्कान

रघुनाथ पीछे के कमरे में बैठा था। वह रामायण का पाठ कर रहा था। उसके स्वर में गायन छिपा था। काँथा बनाते हुए यमुना की सुई कपड़े को पार कर गई। उन्होंने दुकान से एक आवाज़ सुनी।

"वह ज़रूर उठ गया होगा," यमुना बोली, "आप जाकर देख क्यों नहीं आते?" रघुनाथ उठ खड़ा हुआ। "उस आदमी के बारे में कुछ न कुछ गड़बड़ लगती है। वह जड़ी-बूटियों की दवाइयाँ बेच कर अपना निर्वाह करता है। वह सोने की मोहर कहाँ से आई?"

"हो सकता है वह पीतल ही हो।"

"नहीं वह खालिस सोना है," रघुनाथ ने ज़ोर देकर कहा। "मेरे पिता एक

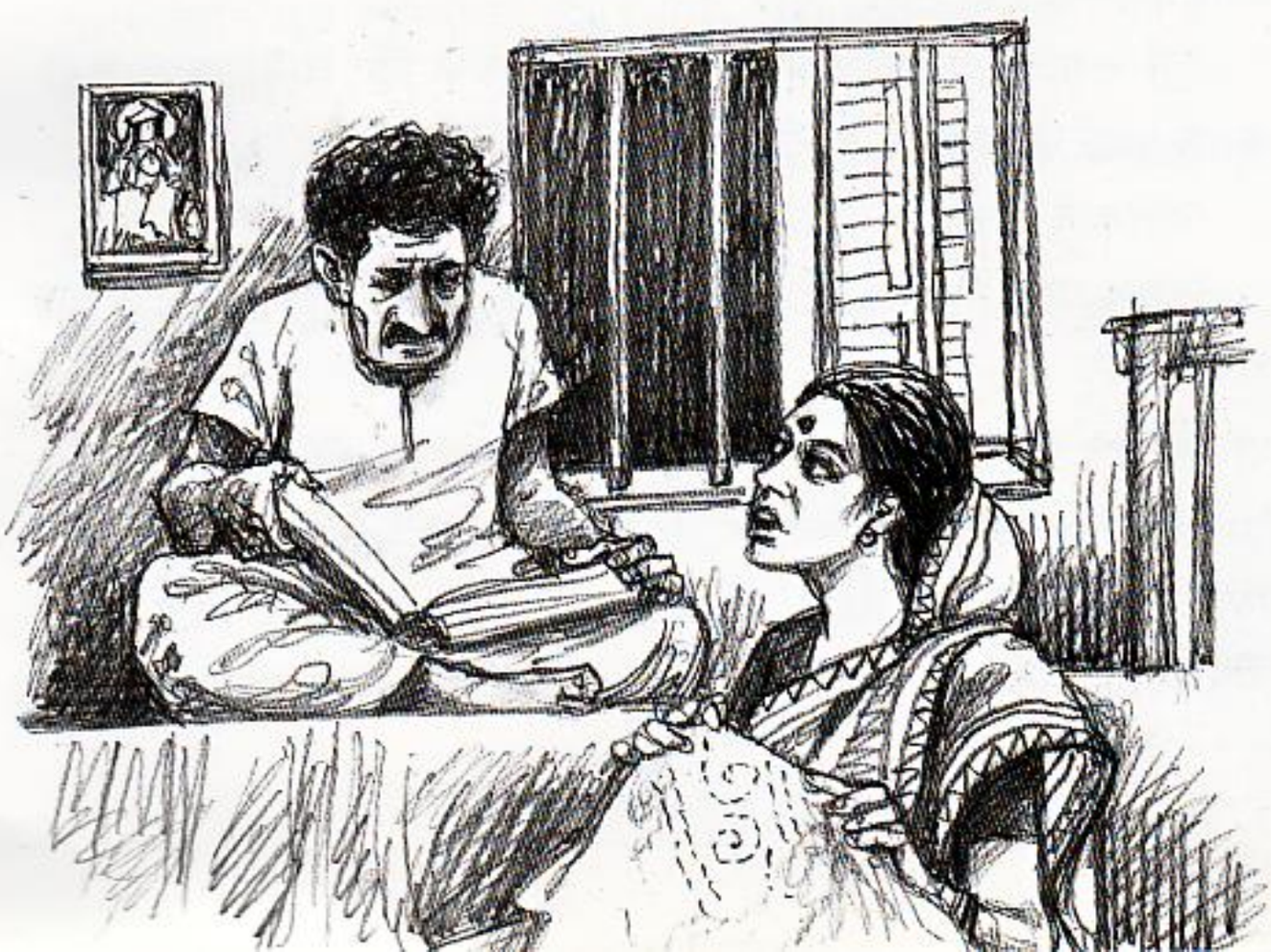

सुनार के यहाँ काम करते थे। मैंने ऐसी चीज़ें बहुत देखी हैं।"

"और इससे तुम्हें बहुत फ़ायदा हुआ है! इससे क्या तुम्हारी किस्मत जागी? हम अभी तक सिर्फ़ यही कर सके कि एक कमरे से दो कमरों में पहुँच गए। तुम्हारी किस्मत ने तुम्हें टीन तो दिया है परन्तु सोना नहीं – यहाँ तक कि पीतल भी नहीं!"

"मैं सिर्फ़ एक बात नहीं समझ पा रहा कि एक भिखारी को सोने की मोहर मिली कैसे?"

"शायद उसे विरासत में मिली हो।"

"पर उसका तो इस दुनिया में कोई है ही नहीं।"

"कहीं ऐसा न हो कि वह चोर हो।"

रघुनाथ ने अपना सिर हिलाया। "वह काफ़ी ईमानदार लगता है। और फिर वह हमारा मेहमान है। हमें अपने मेहमानों के बारे में गलत नहीं सोचना चाहिए।"

"ठीक है लेकिन तुम जाकर देखते क्यों नहीं कि वह क्या कर रहा है?"

रामायण को एक ओर खिसकाकर रघुनाथ दुकान के अन्दर चला गया। उसने देखा सत्यदास उठकर बैठ गया था और अपने माथे और गले से पसीना पोंछ रहा था। वह मुस्कराया।

"मेरा बुखार उतर गया, बाबू।"

"ठीक है, पर आज रात रुक जाओ," रघुनाथ ने कहा। उसने दुकान की खड़खड़ी की ओर इशारा किया, "क्या मैं इसे पूरा बंद कर दूँ? हमें पीछे का दरवाज़ा बन्द करना पड़ेगा। ठीक है?"

अचानक सत्यदास ने कहना शुरू किया, "तुम बहुत दयालु हो, बाबू। अच्छे आदमी हो। कोई भी किसी अजनबी को अपने घर नहीं घुसने देता। तुमने मुझे आसरा दिया। ऊपर भगवान सब कुछ देखता है। उसकी नज़र से कुछ नहीं छुपा – क्यों ठीक है न?"

कपड़े की थैली

अगली सुबह आकाश साफ़ था। सूरज की तेज़ किरणें पृथ्वी को नहला रही थीं। सत्यदास ने कुएँ के पास ही हाथ-मूँह धोया। कोमलता से यमुना को नमस्कार किया जो आँगन साफ़ कर रही थी। जब वह तैयार हो गया तो अपना गट्ठर और बक्सा बाँधने चला गया। वह जाने को तैयार खड़ा था कि रघुनाथ ने उसको रोकते हुए कहा, "तुम खाली पेट नहीं जा सकते। चाय आ रही है।"

"अच्छा विचार है। मैं चाय का बहुत शौकीन हूँ।"

"तुम यहाँ से कहाँ जाओगे?"

"मेरे कदम जहाँ भी ले जाएं।" यमुना चाय ले आई।

"लो चाय पी लो। ज़रा मैं तुम्हारे लिए बिस्कुट ले आता हूँ," रघुनाथ उसे एक कप चाय पकड़ाते हुए बोला। वह कुछ घर के बने बिस्कुट ले आया।

"बहुत सुन्दर दिन है, बाबू। सूरज देवता अपनी मुस्कान हम पर बिखेर रहे हैं। धरती कितनी स्वच्छ और ताज़ा है।"

नया दिन रघुनाथ के लिए भी काफ़ी आशाएँ लेकर आया। कौए उड़ रहे थे, झाड़ियों में चिड़ियाँ चहचहा रहीं थीं। एक कुत्ता दुकान के सामने घूम रहा था। सत्यदास ने अपना कप धोकर वापस पकड़ा दिया। "मुझे अब जाना चाहिए, बाबू। मैं तो बस एक ऐसा ही पागल भिखारी हूँ। तुमने दया करके मुझे खाना खिलाया और रहने का स्थान दिया। आज के ज़माने में कोई ऐसा नहीं करता। भगवान तुम पर सदा कृपालु रहें।"

"फिर कितने दिनों बाद तुम इस तरफ़ आओगे?"

"शायद एक हफ़्ते बाद, या हो सकता है कुछ महीनों बाद।"

"जब इस तरफ़ आओ तो मुझसे मिलना नहीं भूलना।"

"जी हाँ, ज़रूर बाबू।" सत्यदास ने हाथ जोड़कर नमस्ते किया और चल दिया। रघुनाथ उसे जाता हुआ देखता रहा।

दिन की शुरूआत काफ़ी व्यस्ततापूर्ण हुई। रघुनाथ अपनी दुकान के अन्दर-बाहर आता-जाता रहा और हुकुम देता रहा।

बिशु को उसके रोज़मर्रा के हुकुम पता थे। सबसे पहले उसे दुकान में झाड़ू लगानी थी। फिर उसका मालिक दुकान के प्रवेश द्वार के सामने पानी छिड़केगा। फिर वह अगरबत्ती जलाकर लक्ष्मी की तस्वीर के सामने भक्ति-पूर्वक झुककर प्रणाम करेगा। एक तश्तरी में थोड़ा अक्षत और हल्दी रखेगा और तब उस दिन के व्यवसाय की शुरूआत होगी।

जब तक बिशु झाड़ू लगाता रहा, तब तक रघुनाथ बाहर खड़ा रहा। कहीं पर एक कौआ काँय-काँय बोल रहा था। कहीं पर कोई लकड़ी काट रहा था।

अचानक बिशु की आवाज़ ने वातावरण को भंग कर दिया। "बाबू-बाबू – ज़रा इसे देखिए।"

उसने ज़मीन से कुछ उठाया। रघुनाथ ने फ़ौरन पहचान लिया। यह वही काले रंग की कपड़े की थैली थी जिसमें से सत्यदास ने पैसे निकाले थे।

उसने उसे हाथ में उठाकर वजन महसूस करने की कोशिश की। काफ़ी भारी थी। सत्यदास अपना सबसे कीमती सामान कैसे भूल गया? उसके पास तो ज़्यादा पैसे भी नहीं थे। वह ज़रूर किसी मुसीबत में पड़ जाएगा। इसके लिए शायद उसको वापस भी आना पड़े।

रघुनाथ कुछ रुका। उसने इसी थैली से सोने का सिक्का गिरते देखा था।

सत्यदास को अब तक इस बात का पता चल गया होगा। यह ज़रूर बक्से से गिर गई होगी।

उसे अपनी छाती में कुछ खिंचाव सा लगा। उसकी साँसें तेज़ हो गईं। उस थैली को खोलकर देखने में उसे अजीब-सी हिचकिचाहट हो रही थी। उसने बिशु की ओर देखा। वह काम में लगा था। रघुनाथ ने धागा खींच कर थैली को खोला और उसमें से सोने का सिक्का निकाला। वह खुद एक सुनार का बेटा था। उसे पता था। वे सोने के सिक्के ही थे। काफ़ी पुराने, शायद रानी विक्टोरिया के समय के।

वह घूमकर अन्दर चला गया।

"यमुना, तुम ज़रा एक मिनट के लिए यहाँ आ सकती हो?"

यमुना कुँए के पास थी, कपड़े सुखा रही थी।

"यह क्या है?"

रघुनाथ ने अपना हाथ उसके सामने फैला दिया। "सोना। वह आदमी इसे यहाँ छोड़ गया ...।"

"सोना?" यमुना स्तब्ध थी। वह धीरे-धीरे आगे बढ़ी उन्हें पास से देखने के लिए। यमुना ने पहले कभी भी सोने का सिक्का नहीं देखा था। "दिखाओ, दिखाओ," वह देखने के लिए काफ़ी उत्कंठित थी।

रघुनाथ ने उसे सिक्का पकड़ा दिया। यमुना ने उस पर बहुत प्यार से उंगलियाँ फिराई। हो सकता है उसने सोने का सिक्का पहले कभी हाथ में नहीं लिया हो पर यह सिक्का देखकर वह समझ गई कि सिक्का कैसा होता है। "कितने हैं?"

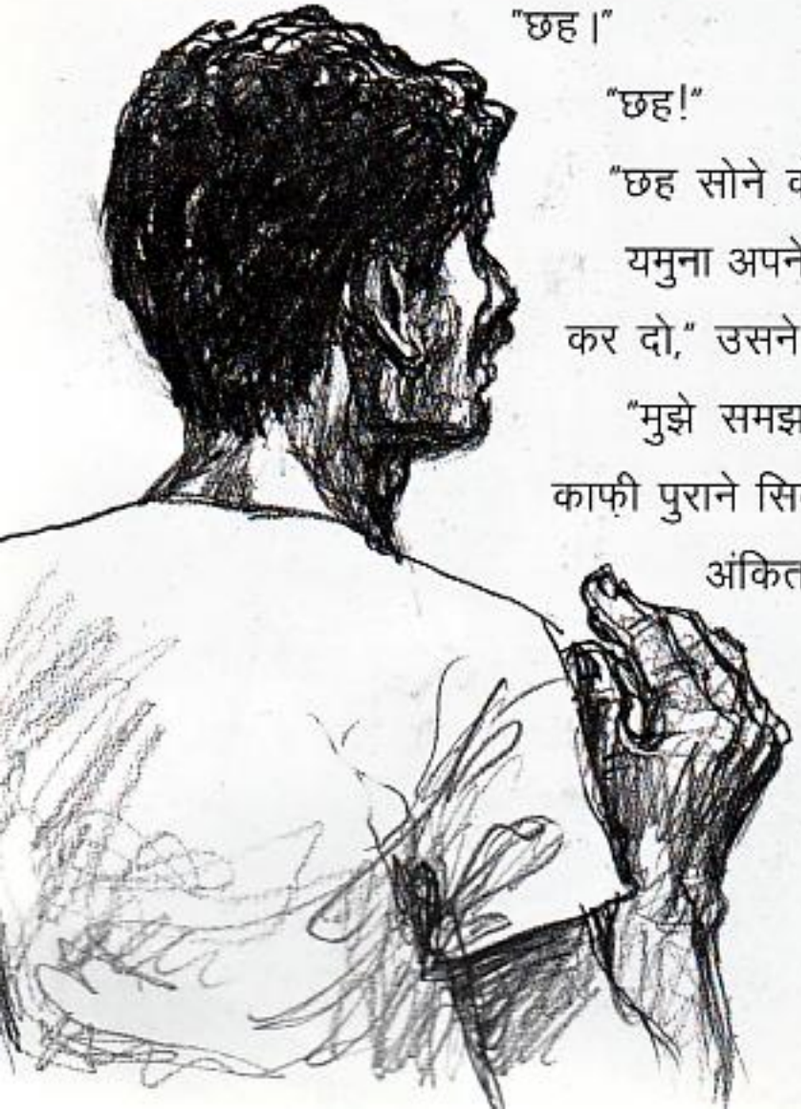

"छह।"

"छह!"

"छह सोने के सिक्के और दो अँगूठियाँ।"

यमुना अपने पति की ओर देखने लगी। "दरवाज़ा बन्द कर दो," उसने कहा। "बिशु कभी भी आ सकता है।"

"मुझे समझ नहीं आ रहा," रघुनाथ बुदबुदाया। "ये काफ़ी पुराने सिक्के हैं जिन पर रानी विक्टोरिया का चित्र अंकित है। उसे सिक्के मिले कहाँ से?"

"मुझे पत्थरों के बारे में खास नहीं मालूम। एक गहरे रंग का है और दूसरा हल्के रंग का, लगभग आर-पार देखा

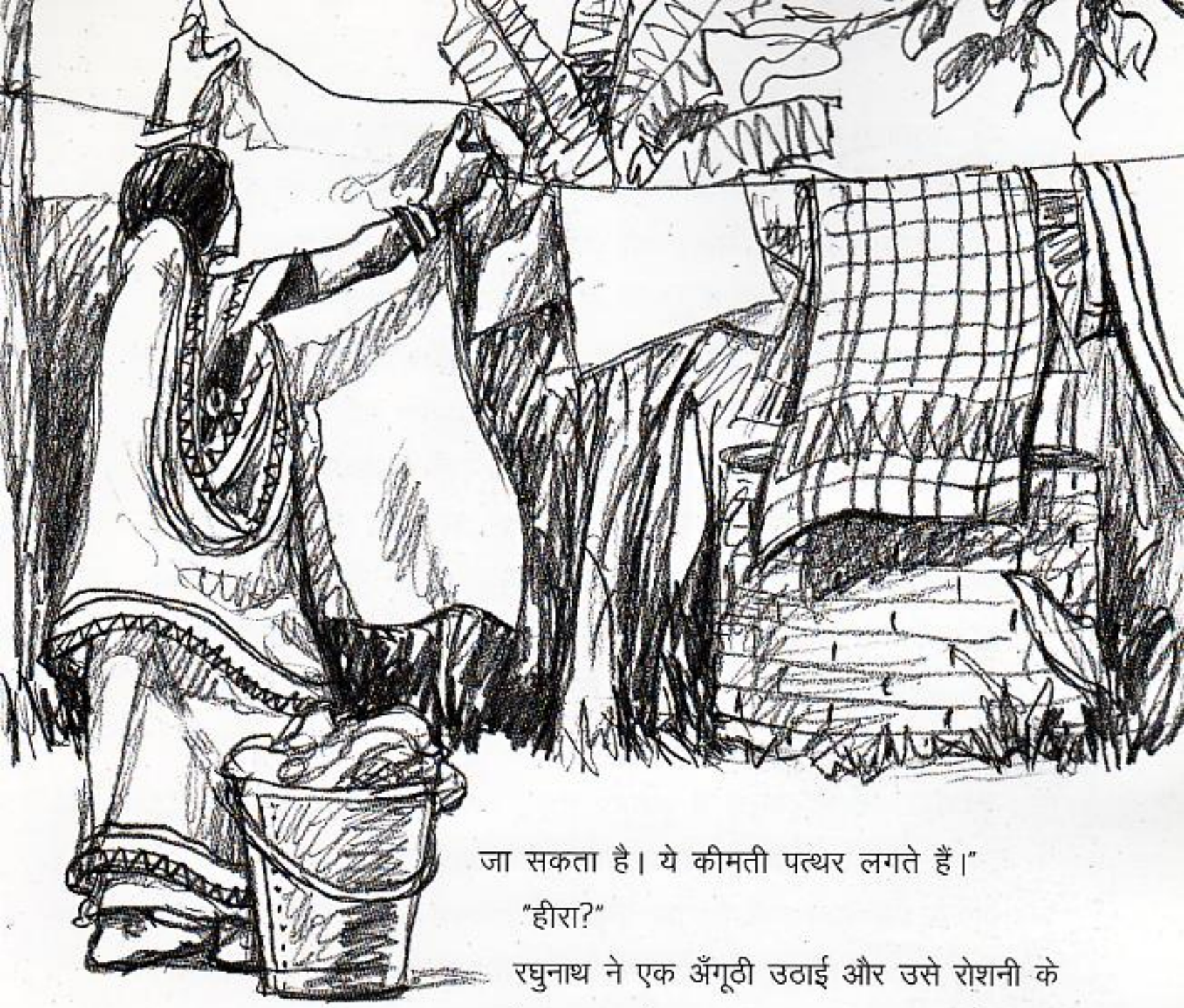

जा सकता है। ये कीमती पत्थर लगते हैं।"

"हीरा?"

रघुनाथ ने एक अँगूठी उठाई और उसे रोशनी के सामने पकड़कर देखा।

"हो सकता है," उसने कहा और जितना समझदार वह था नहीं उससे अधिक समझदारी दिखाने का प्रयत्न कर रहा था।

"और वह दूसरी वाली?"

उसने दूसरी अँगूठी निकाली। यह गहरे रंग के पत्थर की थी। "मुझे पता नहीं ... हो सकता है नीलम हो।" रघुनाथ ने सभी कुछ वापस थैली में रख दिया।

"यह सत्यदास है कौन?" ज़ोर से कहकर अपना आश्चर्य प्रकाशित किया। "वह किसी भी तरह से ऐसा आदमी नहीं लग रहा था, जो सड़कों पर अपने गहनों की थैली लेकर घूम सके। उसे जोड़ बटोरकर मात्र पाँच रुपए भी नहीं मिल पाते, फिर ये छह सोने के सिक्के और दो अंगूठियाँ आईं कहाँ से?"

"शायद उसने चुराई होंगी," यमुना का मत था, "शायद इसीलिए वह घबराकर भाग गया।"

रघुनाथ ने सिर हिलाया। "सत्यदास चोर हो ऐसा दिखाई तो नहीं देता। वह असल में एक फेरीवाला लगता है जो दर्शकों को अपने जादू के कारनामे दिखाता है। तुम्हें पता है, सत्यदास एक जादूगर है, उसने मुझे बताया था।"

"ओह! तभी!" यमुना बोली, "ये उसकी खेल-सामग्री है। जादू के खेल के थैले का सामान – नकली सोना और रंगीन पत्थर।" परन्तु रघुनाथ को विश्वास नहीं हुआ।

"तुम क्या करोगे?" यमुना ने पूछा।

"देखता हूँ ..." रघुनाथ ने अपना सिर खुजाते-खुजाते कहा। "उसे पता तो चल जाएगा कि थैली नहीं है। वह इसको लेने ज़रूर वापस आएगा। आखिर यह सिर्फ़ कुछ रुपयों का सवाल तो है नही!"

बिशु उन्हें बुला रहा था।

यमुना फुसफुसा कर बोली, "तो अब हमें क्या करना चाहिए?"

"जब कोई न देख रहा हो तो यह थैली अपने संदूक में डाल दो। इसके बारे में एक भी शब्द किसी से न कहना। सावधान रहना। समय बहुत खराब है। आजकल किसी पर भरोसा नहीं किया जा सकता।"

दूसरों से कुछ ऊँचा रुतबा

अगले दिन सत्यदास नहीं लौटा – उसके अगले दिन भी नहीं।

एक सप्ताह बीत गया। रघुनाथ को आशा थी, वह किसी भी मिनट आ सकता था – अंधेरी रात में भी, वह उसका इंतज़ार करता रहा। अपने खरीदारों का ध्यान रखते हुए भी, वह इंतज़ार करता रहा। उसने अपनी नज़रें रास्ते से नहीं हटाईं। सत्यदास किसी भी समय पेड़ों के बीच से निकलकर, कंधे पर झोला लटकाए, हाथ में बक्सा लिए, धूल से सने पैरों सहित, आकर उपस्थित हो जाएगा।

सप्ताह महीनों में बदल गए। सर्द हवाएं पेड़ों की पत्तियाँ उड़ाकर ले गई और घास का रंग बदलकर भूरा हो गया।

क्या वह पकड़ लिया गया होगा? रघुनाथ ने सोचा। शायद वे सिक्के चोरी के थे। पर सत्यदास ऐसा धोखेबाज़ लगता तो नहीं था।

"तुम्हें लगता है कि वह मर चुका है?" रघुनाथ ने अपनी पत्नी से पूछा।

"वह वापस नहीं आया, यह बात पक्की है।"

रघुनाथ इंतज़ार करता रहा। शायद सत्यदास बैसाखी के मेले के समय आए। सब तरह के लोग आए। बैसाखी आई और चली भी गई। लेकिन सत्यदास का नामोनिशान तक नहीं था।

एक साल निकल गया। सावन का महीना फिर से आ गया। परन्तु सत्यदास नहीं आया। फिर एक दिन, रघुनाथ ने सोचा कि सोने का एक सिक्का बेच दिया जाए। काफ़ी मुश्किल का समय चल रहा था। वे हमेशा के लिए उसका इंतज़ार नहीं कर सकते थे। वह शहर गया और एक सिक्का चंदू सुनार को बेच दिया। यमुना के लिए उसने साड़ी खरीदी। रास्ते में घर के लिए भी कुछ सामान खरीदा।

उस रात रघुनाथ और यमुना काफ़ी देर तक बातें करते रहे। सबसे पहले क्या ठीक करवाना चाहिए – घर या दुकान? उन्होंने फैसला किया कि दुकान के लिए कुछ और माल खरीदना चाहिए।

वैसे वह पैसा ज़्यादा दिनों तक नहीं चल सका। यमुना ने सुझाव दिया कि सोने का एक और सिक्का बेच देना चाहिए।

"लेकिन मैं चंदू बाबू के यहाँ दुबारा नहीं जा सकता," रघुनाथ ने विरोधपूर्ण स्वर में कहा, "मैंने उससे झूठ बोला था। वह शायद शक करे कि हम जैसे गरीब लोगों के पास, एक के बाद एक, सोने के सिक्के कहाँ से आए?"

"तुम क्या करोगे?"

"मुझे इनका आज का दाम मालूम है। मुझे कोई धोखा नहीं दे सकता। अगर बर्धमान चला जाऊँ तो ज़्यादा अच्छा रहेगा। मैं सुबह की गाड़ी से जाऊँगा और शाम तक लौट आऊँगा।"

रघुनाथ बर्धमान से काफ़ी खुशी-खुशी लौटा, "मुझे तीस अधिक मिले। सोने का दाम बढ़ता ही रहता है।"

पूजा से पहले, रघुनाथ ने तीन सिक्के खर्च कर डाले। वह काफ़ी मौज कर रहा था। उसकी दुकान भी एकदम नई-नई लग रही थी। अब उसके पास बैठने के लिए टीन की अच्छी कुर्सियाँ थीं, बेहतर शटर था और बेचने के लिए बेहतर

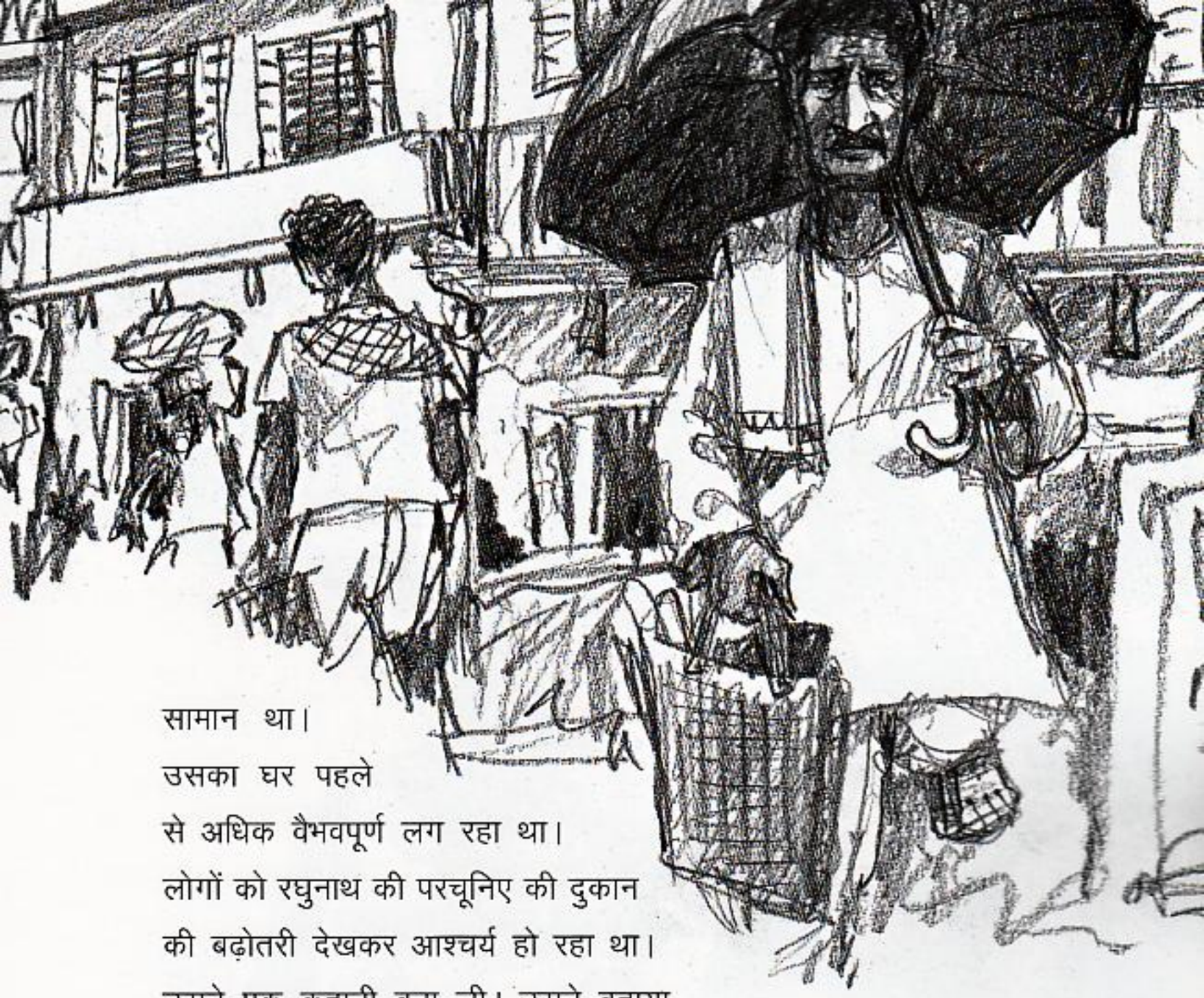

सामान था।
उसका घर पहले
से अधिक वैभवपूर्ण लग रहा था।
लोगों को रघुनाथ की परचूनिए की दुकान
की बढ़ोतरी देखकर आश्चर्य हो रहा था।
उसने एक कहानी बना ली। उसने बताया,
यमुना के चाचा से पैसा मिला जो अभी कुछ दिन पहले सारा पैसा अपनी भतीजी के नाम करके स्वर्ग सिधार गए।

एक दिन रघुनाथ ने यमुना से कहा, "याद है कभी लोग मुझे कैसी नीची नज़रों से देखते थे – अब देखो उनको। हलधर बाबू का सबसे बड़ा बेटा शशाधर मुझे अपने यहाँ की पूजा के लिए आमंत्रित करने आया था। आप अवश्य आइएगा। वह कह रहा था पिताजी ने खास आपसे आने के लिए कहा है।"

"हूँ ..." यमुना खुश हुई। तो अब वे अमीर हलधरों के स्तर के हैं।

सत्यदास

पूजा खत्म हो गई। रघुनाथ की दुकान पर अच्छी कमाई हो रही थी। उन्होंने एक लड़का रख लिया था। उसका व्यवसाय काफ़ी चल निकला था।

यमुना ने अभी तक जिन-जिन चीज़ों की कामना की थी, उसके पास अब वह सब कुछ था। कमरों की मरम्मत करवा ली गई थी। उसकी रसोई और गोदाम, सभी चमक रहे थे। अब उसके पास ढंग से नहाने के लिए एक गुसलखाना भी था। रघुनाथ अब काफ़ी खुश था।

उस वर्ष सर्दी कुछ जल्दी ही आ गई। उस शाम रघुनाथ अपनी दुकान बंद करने ही वाला था। उसने अभी रोशनी बुझाई ही थी। कोने में सिर्फ़ एक लालटेन जल रही थी जिसकी लम्बी-सी परछाई दीवार पर पड़ रही थी। रघुनाथ ने अपना हाथ शटर पर रखा ही था उसे खींच कर नीचे गिराने के लिए कि अचानक वह रुक गया। एक खरीदार ने प्रवेश किया।

"कौन ... कौन है?" रघुनाथ ने कुछ घबरा कर पूछा।

"बाबू, मैं हूँ।"

वही आवाज़! रघुनाथ वहीं जड़ हो गया। आनेवाले व्यक्ति को भली भाँति देखने की चेष्टा करने लगा।

"सत्यदास?"

"नमस्कार, बाबू।"

उसका वैसा ही थकान पूर्ण चेहरा था। और अब बे-तरतीब झाड़ जैसी बिखरी-बिखरी दाढ़ी भी उग आई थी। कंधे पर लटका झोला और लकड़ी का बक्सा वही था। वही छतरी, वही काला कोट। सिर्फ़ एक मोटा-सा मफ़लर नया था।

सत्यदास ने अपना सामान नीचे रख दिया।

"आपके क्या हालचाल हैं, बाबू?"

रघुनाथ के मूँह से कोई शब्द नहीं निकले। ऐसा लग रहा था मानो उसके गले का फंदा कसता जा रहा हो। वह दुकान में खड़े उस आदमी को देखता रहा। क्या यह सत्यदास ही था?

"मैं यहाँ से गुज़र रहा था। मैंने आप लोगों को वचन दिया था कि मैं आपको देखने आऊँगा।"

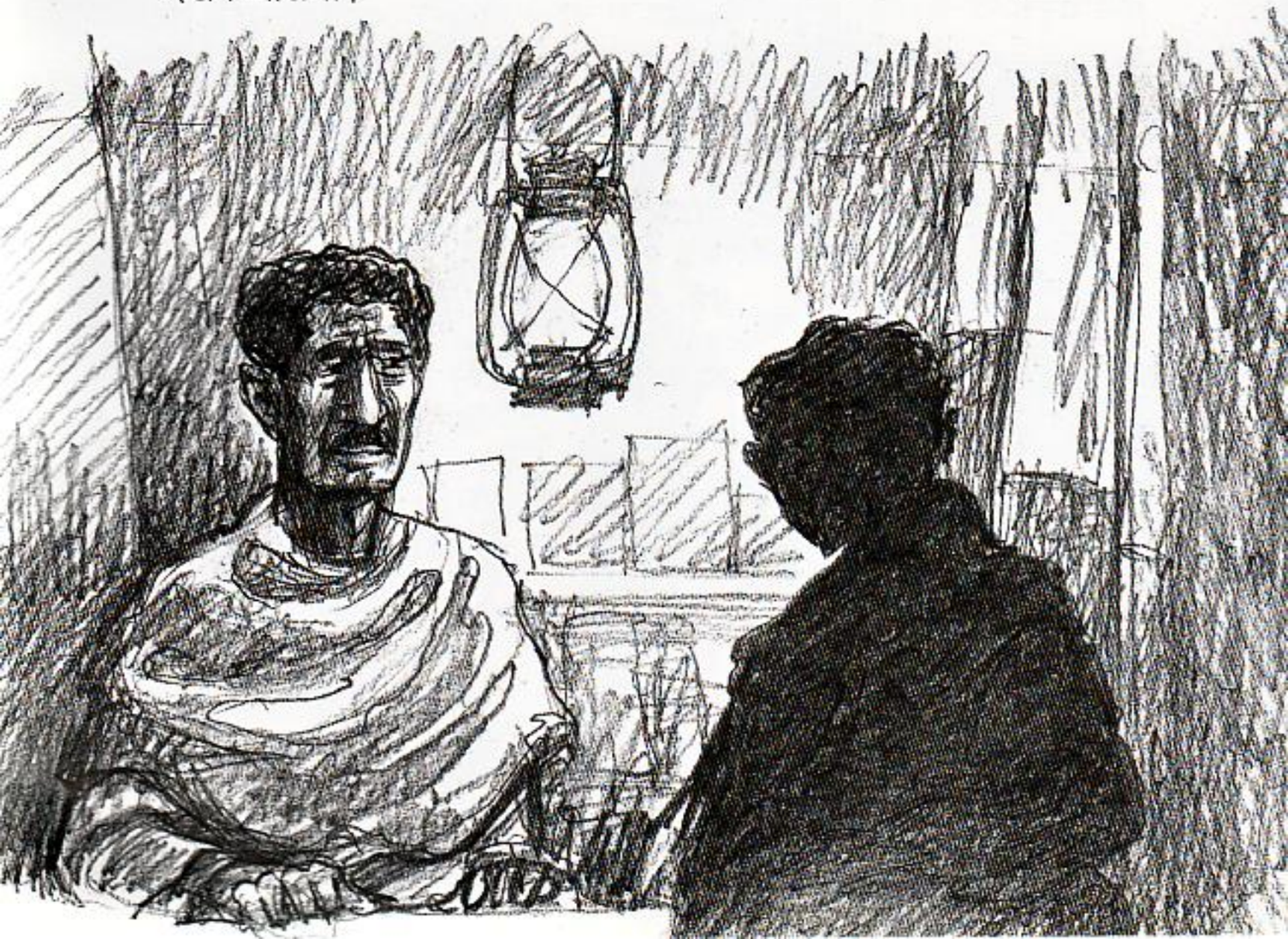

"तुम कहाँ से आए हो?" रघुनाथ ने कुछ कर्कश स्वर में पूछा।

"हृदयपुर से। आप कैसे हैं?"

रघुनाथ अभी भी हैरान था। उसने सिर्फ़ सिर हिला दिया। सत्यदास ने दुकान पर नज़र दौड़ाई। उसके चेहरे पर एक मुस्कान फूट पड़ी। "पिछली बार जब मैं आया था, काफ़ी बारिश हो रही थी।"

रघुनाथ ने उसे संदेहभरी नज़र से देखा। यह यहाँ क्यों आया है? सत्यदास ने थोड़ा खाँसकर अपना गला साफ़ किया। "मेरा गला खराब है। थोड़ी चाय मिल सकती है? पिछली बार आपकी पत्नी ने मेरे लिए गरमा-गरम चाय बनाई थी, वह मुझे आज भी याद है।"

रघुनाथ ने लालटेन की बत्ती कुछ ऊँची कर दी। "बैठो," उसने भद्रता की खातिर कहा।

अन्दर अपने कमरे में यमुना अपने फटे पैरों पर क्रीम और नारियल का तेल लगा रही थी। वह रंगीन ब्लाउज़ के साथ हैंडलूम की साड़ी पहने थी। बाल करीने से बँधे हुए थे। आजकल वह देखने में एक धनी-मानी दुकानदार की पत्नी लगती थी।

"वह यहाँ आया है," रघुनाथ ने रूखे-से स्वर में कहा।

"कौन?"

"सत्यदास।"

"सत्यदास! यहाँ आया है?"

"हाँ, अभी कुछ देर पहले ही आया है।"

वह खड़ी हो गई। "वह अभी भी ज़िन्दा है?"

"लगता तो यही है।"

"उसने कुछ माँगा है?"

"अभी तक तो नहीं। अभी ही आया है। चाय माँग रहा है। जुकाम है, गला खराब है।" रघुनाथ ने हल्की-सी मुस्कान चेहरे पर लाने का प्रयत्न किया। "कह रहा है, पिछली बार तुमने उसे जो चाय बनाकर दी थी, वह अभी तक नहीं भूला।" यमुना ने मुँह बनाया।

"हम उसका क्या इलाज करें?"

"पहले उसे थोड़ी चाय दे दो।"

"कुछ नहीं कहो," यमुना ने सावधान किया। "तुम उससे छुटकारा पा सकते हो?"

रघुनाथ ने अपना सिर हिलाया।

"वह रात यहाँ गुज़ारना चाहता है। शायद कल चला जाए।"

"सावधान रहना। कोई चीज़ उसे नहीं देना। कुछ भी माँगे तो मना कर देना।"

वह चाय बनाने अन्दर चली गई।

सत्यदास बहुत स्वाद ले-लेकर चाय पीने लगा। बीच-बीच में एक आध बार खाँसता रहा। रघुनाथ उससे कुछ फुट की दूरी पर बैठा था। सत्यदास बोला, "मेरी छाती काफ़ी कमज़ोर है, बाबू। मौसम के ज़रा भी बदलाव से मुझे खाँसी आने लगती है।"

"और वह जो बुखार हुआ था, कैसा है अब?"

"बुखार तो आता जाता रहता है। वह मुझे नहीं छोड़नेवाला है।"

"और तुम्हारी जड़ी-बूटियाँ?"

"पहले की तरह ही है। अभी मैं एक विशेश जड़ी लेने पंचकोट तक गया था। पर तुम जो चाहो वह क्या कभी मिला है?"

रघुनाथ का ध्यान बँट गया। "तो तुम पूरा साल घूमने में ही बिता देते हो?"

"वह तो मेरी किस्मत है। मैं एक बीड़ी पी लूँ?"

"खाँसी होने पर तुम्हें बीड़ी नहीं पीनी चाहिए।"

"बस एक-आध कश लगाऊँगा," सत्यदास बोला। "फिर मैं हाथ-मुँह धोऊँगा। मैं रात को यहीं रहूँगा। पिछली बार मैं यहाँ बहुत आराम से रहा था। आप और भाभी-जी इतने दयालु हैं।"

रघुनाथ अपना संदेह नहीं छिपा सका। "तुम जब यहाँ रहने आ ही गए हो

तो ज़रूर रहो। लेकिन मैं अब चलता हूँ। मुझे अपनी प्रार्थना करनी है ..." उसने भावहीन ढंग से कहा।

"हाँ, हाँ ज़रूर बाबू।"

रघुनाथ की प्रार्थना करने की इच्छा नहीं थी। वह अपने बिस्तर पर बैठ गया, बिना खुली रामायण गोद में थी। यमुना उसके पास ही खड़ी थी।

"अपना मुँह बन्द रखना। उसके फंदे में न पड़ जाना," उसने सुझाव दिया। "ऐसा नहीं है कि तुमने उसकी सम्पत्ति चुरा ली। अगर लोग अपनी चीज़ें छोड़ जाएँ तो इसमें तुम्हारा दोश नहीं है – या है? जिसको मिले उसी का धन।"

"वैसे मैंने इन्तज़ार किया था। कई महीनों तक। मुझे और क्या करना चाहिए था? वह वापस ही नहीं लौटा। आखिर मैं भी तो इंसान हूँ। मैं कितने दिन तक इस थैली में सोने को सड़ने के लिए छोड़ देता? तुम्हीं बताओ।"

"वह वापस आया ही क्यों?" यमुना ने शिकायत भरे स्वर में कहा।

"हमारी ही बदकिस्मती है।"

"वह इस समय ही यहाँ क्यों आया? वह पहले भी तो आ सकता था। बदमाश! चोर!"

"उसे जल्दी से खाने को कुछ दे दो। मैं उससे बात नहीं करना चाहता। मैं आशा करता हूँ कि वह सुबह सवेरे ही यहाँ से चला जाएगा।"

उसका खाना हो चुका। सत्यदास सोने की तैयारी में था कि रघुनाथ फिर से अन्दर आया।

"तुम्हारी दुकान बहुत अच्छी लग रही है," सत्यदास ने बातचीत करनी शुरू की। रघुनाथ ने ध्यान से उसकी ओर देखा। परन्तु सत्यदास अपने थैले से एक चादर निकालने के लिए उलट-पुलट कर रहा था। उसका चेहरा छिपा था।

वह कहता गया, "यहाँ पर अब सामान भी काफ़ी है। अब तो यह किसी भी बड़े स्टोर की तरह दिखाई देती है, बहुत बढ़िया। मुझे बहुत अच्छा लगा, बाबू।" रघुनाथ ने बेतुके ढंग से जवाब दिया। उसे डर था कि वह कुछ और ऐसा न पूछ ले जिसका जवाब वह न दे सके। परन्तु सत्यदास ने सिर्फ़ इतना ही कहा, "तुम्हारा घर भी बहुत सुन्दर ढंग से सजाया गया है। बहुत अच्छा किया, बाबू!"

रघुनाथ को अपने पैरों की ज़मीन खिसकती नज़र आई। वह सत्यदास से आँख तक नहीं मिला पा रहा था। वह बहुत बेचैन और डरा हुआ था।

"मुझे अब जाना पड़ेगा। आज दुकान के काम से काफ़ी थक गया हूँ।" उसने जम्हाई भरी।

"माफ़ कीजिएगा बाबू, मुझे पहले ही यह बात समझ लेनी चाहिए थी। कृपया आप जाइए, कोई बात नहीं।"

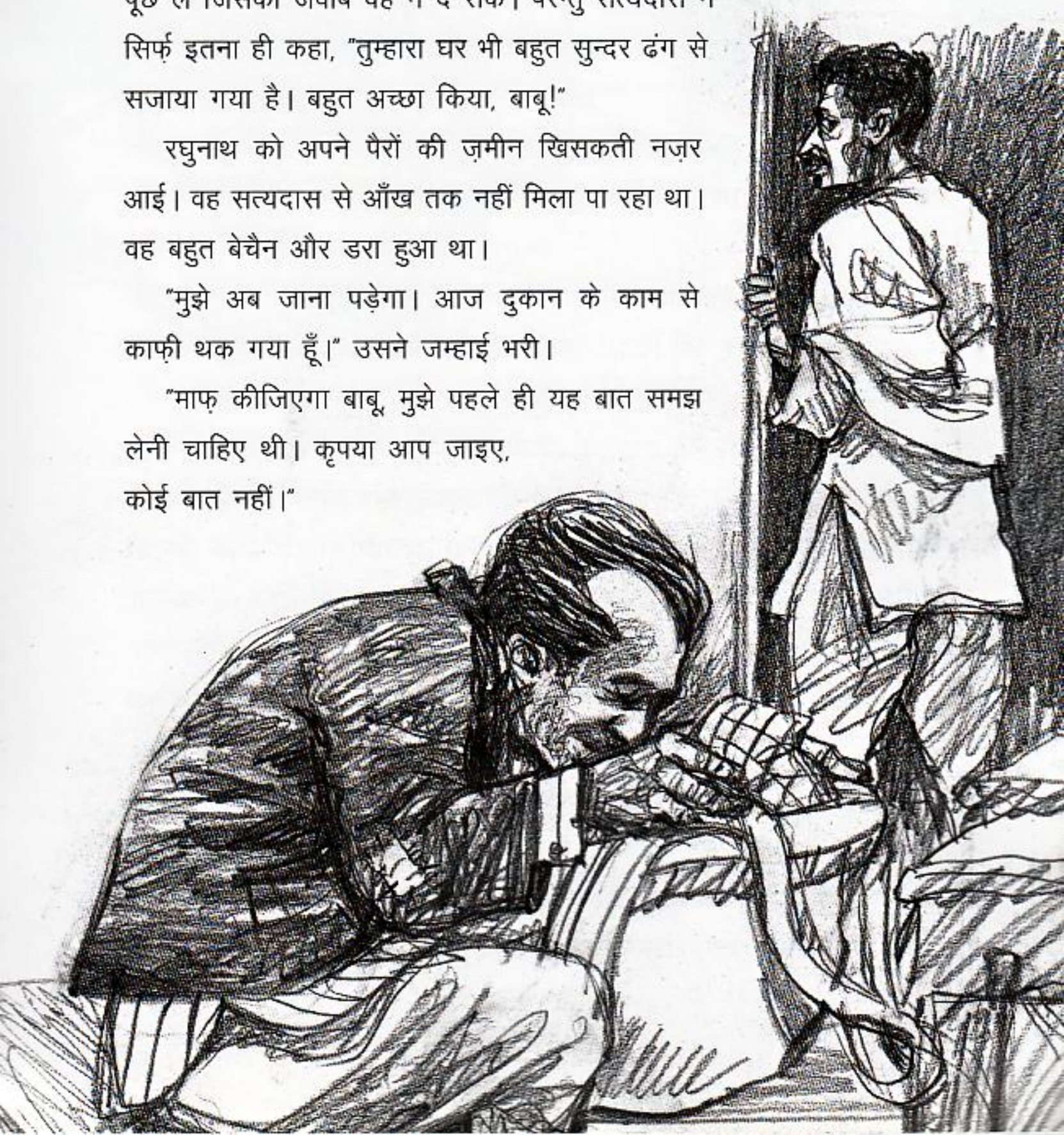

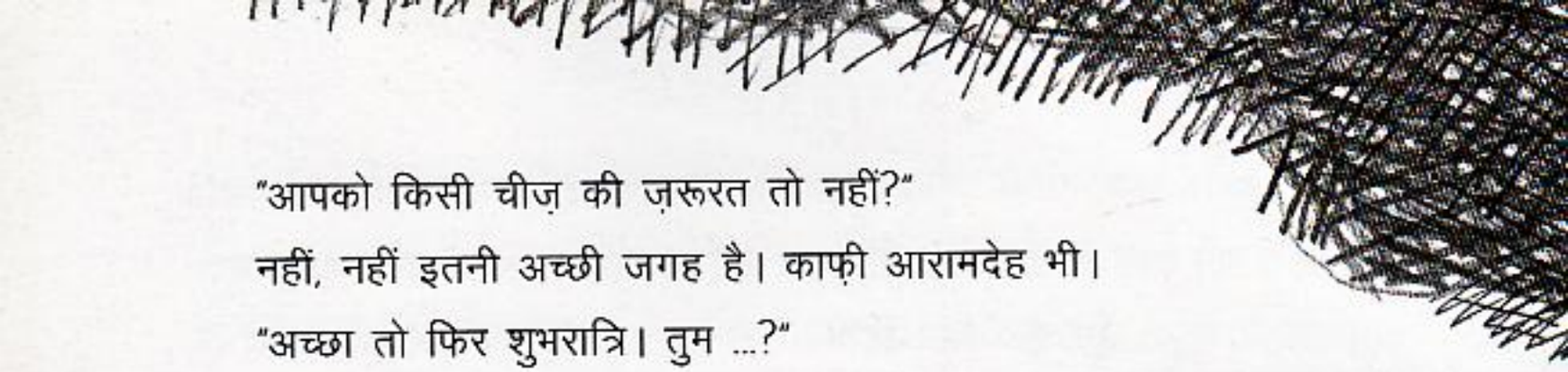

"आपको किसी चीज़ की ज़रूरत तो नहीं?"

नहीं, नहीं इतनी अच्छी जगह है। काफ़ी आरामदेह भी।

"अच्छा तो फिर शुभरात्रि। तुम ...?"

"हाँ मैं कल सवेरे-सवेरे निकल जाऊँगा। मुझे कल एक जगह जाना बहुत ज़रूरी है, पर मैं एकदम घोड़े बेचकर सोता हूँ। कृपया सवेरे मुझे उठा दीजिएगा।"

"हाँ ज़रूर।"

बाद में यमुना ने पूछा, "उसने थैली की बात की क्या?"

"नहीं।"

"ये तो बड़ी अजीब बात है।"

रघुनाथ ने जवाब नहीं दिया। "इससे तो यही लगता है कि वे मोहरें उसकी नहीं थीं," यमुना ने अपना निर्णय सुनाया।

"तो फिर किसकी हैं?" रघुनाथ की बोली में कुछ गुस्सा भरा था।

यमुना कुछ सोचने लगी। "तुम्हें पता है? शायद उसे लगता है कि वह थैली खो गई है। अगर उसे लगता कि वह यहाँ छोड़ गया था तो उसके बारे में पूछता ज़रूर। हमारे लिए यह अच्छा ही है, है न? वह हम पर शक नहीं करता, भगवान का शुक्र है," उसने कहा।

रघुनाथ बोला, "पर वह घर पर किए गए हर तरह के सुधार और बदलाव देख चुका है।"

"उससे क्या, वह कुछ प्रमाणित तो नहीं कर सकता।"

काफ़ी देर हो गई थी। हवा में कुछ ठण्डक-सी घुल गई थी। यमुना की आँखें लग गई। परन्तु रघुनाथ सो नहीं सका। वह बिस्तर पर लेटा रहा अंधेरे में एकटक दृष्टि गड़ाए। सत्यदास ने क्या कहा था? तुम एक अच्छे आदमी हो ...

अगले दिन रघुनाथ ने सत्यदास को उठाया। उस फेरीवाले ने अपना सारा सामान बाँध लिया और हाथ-मुँह धो लिए। वह जाने के लिए तैयार ही था कि रघुनाथ ने कहा, "अभी तक सूरज नहीं निकला, अभी भी बाहर कोहरा छाया है। तुम एक कप चाय क्यों नहीं पी जाते?"

"अरे नहीं बाबू, मैं नहीं पी सकता। अपनी पत्नी को मेरी ओर से प्रणाम कहिएगा।" उसने अपना मफ़लर सिर के चारों ओर इस तरह घुमाकर बाँध लिया कि उसका चेहरा भी नहीं दिखाई दे रहा था। "मुझे जाने दीजिए, बाबू।" उसने अपने हाथ जोड़कर नमस्कार कहा।

रघुनाथ उसे बाहर तक छोड़ने आया। सुबह कोहरा खेतों के ऊपर छाया हुआ था। घास गीली थी। सत्यदास कुछ क्षण के लिए रुका, फिर जल्दी-जल्दी

कदम भरता बाहर चला गया। रघुनाथ ने उसे पीछे से पुकारा, "सत्यदास!"

वह रुक गया।

रघुनाथ अपने विचारों से जूझ रहा था। "तुम क्या कोई चीज़ भूल गए, पिछली बार जब यहाँ आए थे?" उसने अस्पष्ट शब्दों में कहा।

सत्यदास मुड़ा। एक अजीब-सी मुस्कान उसके होंठों पर बिखर गई, "आप क्यों पूछ रहे हैं, बाबू?"

"छोड़ गए थे या नहीं?"

सत्यदास ने ऊपर आकाश की ओर देख कर कहा, "सिर्फ़ वही बता सकता है।"

"वही? तुम्हारा मतलब है भगवान?"

"सूरज। वह अपने साथ सुबह को लेकर आता है। फिर रात आती है। रात और दिन – रोशनी और अंधेरा। उनकी आँखें हैं, तुम्हें पता है!" रघुनाथ ने गहरी साँस खींची। दो अँगूठियाँ! पत्थर की एक हल्के रंग की और एक गहरे रंग की। छह सिक्के! सत्यदास ने अपने चेहरे से ओस की बूँदे पोंछ डाली। उसे अच्छी तरह पता था कि रघुनाथ के दिमाग़ में क्या चल रहा था।

"तुम्हें पता है, बाबू," उसने कहा, "दिन-रात मिलता है एक अनन्त मिलाप

के रूप में। छह ऋतुएँ इस धरती पर नृत्य करती हैं जिनका चक्र कभी समाप्त नहीं होता। उसकी नज़रों से कुछ छिपा नहीं रहता– लालच, पाप, बुराई ... वह सब कुछ देखता है। सिर्फ़ हम लोगों को उनके होने का अहसास नहीं होता। वह प्रत्येक भूल को देखता है – हर ग़लती पर नज़र रखता है। मैं एक गरीब अनपढ़ आदमी हूँ। नैतिकता के बारे में कुछ कहने की क्षमता नहीं है मेरी।"

उसने झुककर नमस्ते कहा, "तुम्हारे लिए मुझे अफ़सोस है। मैं सब समझता हूँ। चलता हूँ।"

और धर्मपुर का सत्यदास उस कोहरे में विलीन हो गया।

रघुनाथ वहीं जड़ीभूत पत्थर की तरह खड़ा रह गया।

बिमल कॉर का जन्म उत्तरी चौबीस परगना के टाकी नामक स्थान पर, 19 सितम्बर सन् 1921 में हुआ था। उन्होंने अपने युवावस्था के दिन आसनसोल तथा बिहार के अन्य स्थानों में बिताए। उन्होंने कई प्रकार के व्यवसाय किए जिसके अनुभव के कारण वे बाद में विभिन्न विषयों पर लिख सके। उनकी रचनाओं से उनकी आधुनिक सोच का पता चलता है जिससे वे युवा लेखक भी प्रभावित हुए जिनके प्रारम्भिक लेखन के समय उन्होंने सहायता की थी। बच्चों के लिए कॉर ने किंकर किशोर राय नामक अवकाश प्राप्त जादूगर उर्फ़ किकिरा चरित्र का निर्माण किया, जो अपने दो सहायकों के साथ रहस्यों का समाधान करता था। कॉर के बहुत से उपन्यासों पर फिल्में भी बन चुकी हैं। इनमें उल्लेखनीय हैं *जोदूबौंश, बौशौंतो-बिलाप, बालिका बोधू* तथा *छूटी*। सन् 1954 से 1982 तक वे *देश* पत्रिका से सम्बद्ध रहे जिसमें सन् 1964 में *ग्रहण* उपन्यास छपा। *असमय* उपन्यास भी *देश* पत्रिका में छपा था जिसके लिए सन् 1975 में उन्हें साहित्य अकादमी द्वारा पुरस्कृत किया गया। अन्य पुरस्कारों के अलावा उन्हें सन् 1967 में आनंद पुरस्कार तथा सन् 1981 में कलकत्ता विश्व विद्यालय द्वारा भारत चन्द्र पुरस्कार से सुशोभित किया गया।

नीता गंगोपाध्याय ने नई दिल्ली के कॉलेज ऑफ़ आर्ट से स्नातक की उपाधि ग्रहण की है। नीता बच्चों की पुस्तकों की चित्रांकक हैं। सन् 1995 में उन्होंने ब्रोटिस्लवा में द्विवार्षिक चित्रांकन में भारत का प्रतिनिधित्व किया था। उनके द्वारा चित्रांकित पुस्तकों में *वंस आपॉन अ टाइम इन इण्डिया* पुस्तक उल्लेखनीय है जिसको सन् 2006 में आई बी बी वाइ की सम्मानित सूची के लिए भी प्रस्तावित किया गया।

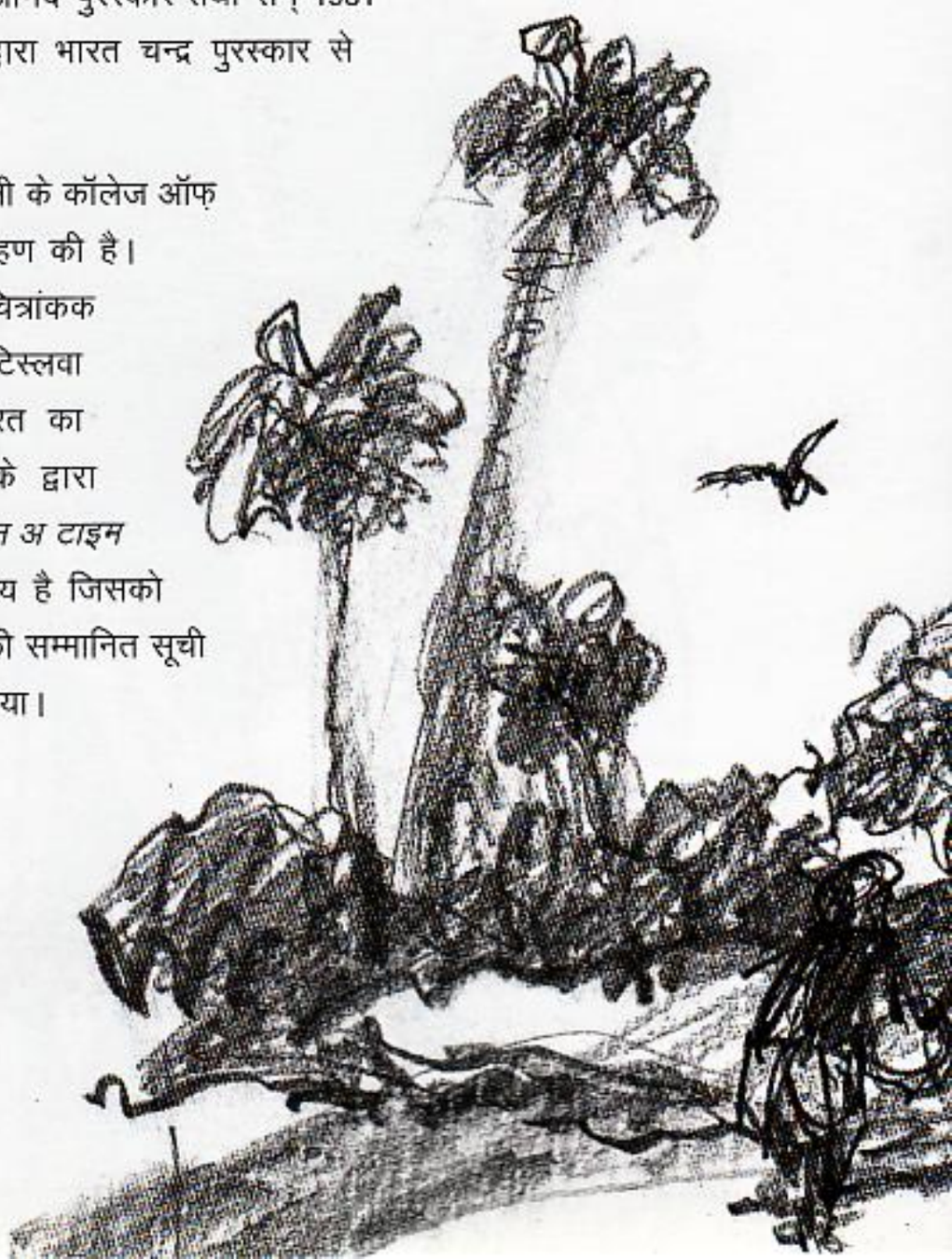

असामयिक वर्षा के एक दिन रघुनाथ एक अजनबी को अपने घर आश्रय देता है। उसके इस आभार तथा कृतज्ञता के तले दबा सत्यदास जाते समय अपने पीछे इतना धन छोड़ जाता है जिससे रघुनाथ का दुखद समय खुशहाली में बदल जाता है।

पृथ्वी के परिवर्तन में जिस प्रकार दिन जाने पर रात और उजाला जाने पर अंधेरा होता है, उसी प्रकार जीवन में सत्य और असत्य घुले-मिले रहते हैं। जीवन में जब तक दुख, कठिनाई रहती है तब तक मनुष्य अपने मूल्य बनाए रखता है। परन्तु ऐश्वर्य के आते ही सत्यता स्वयं निकल जाती है।

recommended by CBSE

कथा की किताब बच्चों के लिए
ISBN 978-81-89020-72-9
9 788189 020729
www.katha.org
रु. 95